शहादत है, मतलूब व मक़सूदे मोमिन

अल्लामा सै० मुहम्मद रज़ी साहब क़िब्ला, कराची
हिन्दी रूप: डॉ आरिफ़ अब्बास

तारीख़ के हर दौर में जब बदी की कुव्वतें उभरीं और तागूती लश्कर सफ़ आरा हुए तो उनसे टक्कर लेने के लिए कुछ ईमानी ताक़तें भी सामने आती रहीं और अपने यक़ीने मोहकम और जज़्ब–ए–हक़ परस्ती से उनका मुक़ाबला करती रहीं और उन्हें शिकस्त देती रहीं और इस तरह उन्होंने नामूसे हक़ की हिफ़ाज़त का हक़ अदा किया और इस राह में कभी उन्होंने अपनी जान माल, इज़्ज़त, आबरू, औलाद, मन्सब और दौलत किसी चीज़ की भी परवा न की और इस ईमानी फ़र्ज़ को अन्जाम दिया जो अल्लाह की तरफ़ से उन पर आएद होता था बिलाशुब्ह इस्लाम दीने इलाही है और यही इन्सानी फ़लाह का वाहिद ज़रिया और वसीला है। इसलिए इसका ज़वाल इन्सानियत की बर्बादी और इस निज़ामे हिदायत की तबाही के मुतारादिफ़ है जो अल्लाह ने इन्सानी फ़लाह के लिए मुक़र्रर फ़रमाया है इसीलिए ये ज़रूरी था कि अल्लाह की तरफ़ से उसके दीन और उसके निज़ामे हिदायत के तहफ़्फ़ुज़ के लिए हमेशा ऐसी शख़्सियतें उभरती रहीं जो एक लमहे के लिए भी बातिल के सामने सरे इताअत न झुका सकीं और बनी नौए बशर की बक़ा और ख़ुशहाली और दुनियवी व उख़रवी फ़लाह व नजात के इस वाहिद वसीले को मिटने से बचा लें। इन्सानी तारीख़ हक़ व बातिल की टक्करों के बेशुमार वाक़िआत अपने दामन में लिये हुए है इन वाक़िआत में बहुत मरतबा ऐसा भी हुआ है जब हक़ की ताक़तों ने बातिल की सफ़ों को माद्दी शिकस्त भी दी, और कभी ऐसा भी हुआ कि हक़ परस्त ताक़तों को माद्दी शिकस्त और माद्दी मग़लूबियत का सामना करना पड़ा। लेकिन यहाँ इस हक़ीक़त को हमेशा हमें

पड़ा। लेकिन यहाँ इस हक़ीक़त को हमेशा हमें अपने सामने रखना चाहिए कि हक़ व बातिल की जंगें जब भी हुईं वह उसूल की जंगें थीं और नज़रियात की लड़ाईयाँ थीं। उसूल और नज़रियात की लड़ाईयों में माद्दी ग़लबा और जुग़राफ़ियाई फ़ुतूहात की कोई क़ीमत ही नहीं हुआ करती हक़ीक़त में इस क़िस्म की जंगों में फ़तह और कामयाबी का असली मेयार उस मक़सद का हुसूल और उस मक़सद की कामयाबी होती है जिसके लिए कोई फ़रीक़ ऐसी जंग लड़ता है। दीनी और तौहीद परस्त ताक़तों की जंग का हमेशा ये मक़सद रहा है कि दुनिया वाले हक़ को पूरी तरह पहचान लें और बातिल के चेहरे पर हक़ की नक़ाब और हक़ के चेहरे पर बातिल का पर्दा न डाला जा सके और इस नुक़्त–ए–नज़र से तो अहलेहक़ हमेशा कामयाब रहे और जब भी हक़ व बातिल का टकराव हुआ उन्हें अपने मक़सद में कामयाबी हुई और कभी बातिल की कुव्वतें हक़ परस्तों से उनकी इस फ़तह को छीनने में कामयाब न हो सकीं। माद्दी फ़ुतूहात के पुजारियों ने इस ख़याले ख़ाम में कि किसी को क़त्ल कर देना और क़ैदी बना लेना ही उनकी जीत की अलामत और दूसरे की शिकस्त की निशानी है, अहले हक़ पर तरह तरह के ज़ुल्म ढाए और उनके ख़ूने नाहक़ से ज़मीन को रंग दिया। मगर ज़ालिम कुव्वतों को कभी इसका अन्दाज़ा न हुआ कि उनका ज़ुल्म जिस क़दर बढ़ता गया, उनकी शिकस्त यक़ीनी और दाएमी होती गई और अहले हक़ का जिस क़दर ख़ून बहता गया और उनकी मताए हयात लुटती रही उसी क़दर उनके मक़सद में इस्तेहकाम पैदा होता गया।

ज़ालिम शैतानी ताक़तें मज़लूम ईमानदारों के ख़ून से खेलती रहीं और अपने फ़ातेह होने का ख़्वाबे परीशाँ देखती रहीं मगर आने वाली तारीख़ उन पर मुसकुराती रही और उन्हें झुठलाती रही कि तुम हरगिज़ असली फ़ातेह नहीं हो बल्कि असली और हक़ीक़ी फ़ातेह वह शहीदाने राहे ख़ुदा हैं जिन्होंने अपनी पाक ज़िन्दगी का एक—एक लम्हा हिफ़ाज़ते हक़ में सर्फ़ कर दिया और अपने मुक़द्दस लहू की आख़िरी बूँद भी नामूसे इस्लाम की हिफ़ाज़त में कभी अज़ीज़ न रखी। हक़ व बातिल की आवेज़िश की तवील तारीख़ के एक यादगार मोड़ पर यही शैतानी ताक़तें यज़ीद के रूप में उभरी थीं और पूरी शिद्दत के साथ हक़ के मुक़ाबले में खड़ी हुईं थीं और दूसरी तरफ़ हक़ परस्ती नवास—ए—रसूल[स०] हज़रत सैय्यदुश्शोहदा हुसैन[अ०] बिन अली[अ०] के लिबास में थी। ये 61[हि०] का ज़माना था जब आशूरे मुहर्रम को हक़ व बातिल की जंग हुई। ये बात मुमकिन ही न थी कि इमाम हुसैन दुनिया में मौजूद होते और दीने ख़ुदा को तबाह होते हुए देखते रहते और उसके तहफ़्फ़ुज़ के लिए कोई इक़दाम न करते। अपनी ज़िन्दगी और राहत व आराम को इस्लामी मफ़ाद पर मुक़द्दम कर देते और यज़ीदी आमिरियत व मुलूकियत के जारेहाना हमलों से इन्सानी और इस्लामी अक़दार का बचाव न करते और इस्लाम की फ़रियाद पर तवज्जो न करते। इमाम हुसैन[अ०] ने इसलाम और हक़ व दयानत की फ़रियाद पर लब्बैक कही, अपने फ़र्ज़ का भरपूर एहसास फ़रमाया और जो कुछ भी उनके क़ब्ज़े में था। उसे अपने साथ लेकर कर्बला के रेगिस्तान की तरफ़ रवाना हो गए। ये बड़ा ही इम्तिहानी और आज़माईशी वक़्त था जब सरवरे कायनात[स०] की पूरी इस्लाही कोशिशें और पूरी तबलीग़ी मेहनत बर्बादी के दहाने पर आ चुकी थी। इस्लाम के बदतरीन दुश्मन अपने नजिस चेहरों पर हक़ की नक़ाब डाल कर उसकी जड़ें काट रहे थे। लातो उज़्ज़ा के पुराने पुजारी तौहीद की बुनियादें हिला रहे थे, तकबीर की सदाएं चंग वरबाब के नग़मों से दबाई जा रही थी। ज़िक्रे ख़ुदा की महफ़िलों और वाज़ो नसीहत के तज़किरों के बजाए आमिरियत व मुलूकियत के क़सीदे पढ़े जा रहे थे, आलो अस्हाबे रसूल[स०] का ख़ून तक मुबाह कर दिया गया था। यज़ीद अपनी मुलूकियत और आमिरियत के नशे में चूर होकर ये नारा लगा रहा था कि—

"बनी हाशिम (ख़ुदा की पनाह) मुल्क व दौलत का एक खेल खेले थे न तो कोई वही उतरी थी और न ख़ुदा का कोई कलाम आया था। हज़रत सैय्यदुश्शोहदा[अ०] ने ऐसे हौलनाक वक़्त में और ऐसी आज़माइशी घड़ी में वही किया जो उनकी बहैसियते नवास—ए—रसूल ज़िम्मेदारी थी। कूफ़ा वालों ने हज़ारों ख़ुतूत भेजे कि हमारी हिदायत के लिए तशरीफ़ लाइये इमाम आली मक़ाम ने उनकी दावत को क़ुबूल किया और कूफ़ा के क़रीब सरज़मीने कर्बला पर आ गए। आपने बारहा फ़रमाया था कि मैं ऐशो तरब और मुलूकियत व सलतनत की ख़्वाहिश लेकर ये सफ़र नहीं कर रहा हूँ बल्कि मेरी ग़रज़ सिर्फ़ इतनी है कि अपने नाना की उम्मत की हिदायत करूँ। मुहर्रम 61[हि०] के नौ दिन भी गुज़र गए फिर वह रात आई जिसकी सुबह, सुब्हे क़यामत से किसी तरह कम न थी ज़माने के क़दम कुछ और आगे बढ़े। सुब्हे आशूर के ख़ूनीं सूरज ने उफ़क़े मश्रिक़ से अपना सर बलन्द किया। मर्दाने हक़ ने मैदाने शहादत में जाने की तैयारियाँ शुरु कर दीं फिर बूढ़े सूरज ने शहीदों का लहू कर्बला की जलती हुई रेत पर गिरते हुए देखा, औरतें बेवगी की आज़माईश में मुब्तला होने लगीं, माओं की गोदें ख़ाली होने लगीं। बच्चे यतीम होने लगे और तीन दिन के भूके प्यासे परस्ताराने हक़ जामे शहादत नोश करने लगे। आख़िर आसमान की नीलगूँ आँखों ने वह वक़्त भी देख लिया जब हुसैन[अ०] का छः महीने का बेटा अली असग़र दुश्मन के तीन भाल के ज़हरीले तीर का ख़ुद हुसैन की गोद में निशाना बन गया और नाज़ुक गले पर तीर खाकर बच्चे ने बाप को देखा और फिर मुस्कुरा कर बाप के गले में अपने छोटे—छोटे हाथ डाल दिये और दुनिया से रुख़सत हो गया। हुसैन[अ०] ने बच्चे के ख़ून को चुल्लू में लेकर अपने चेहरे पर मला और

बक़िया.... पेज 29 पर

को भी ख़ुशी से साथ छोड़ने की इजाज़त दे दी।

और जब ये देखा कि साथियों में कोई जाने के लिए नहीं उठा तो हिम्मत बढ़ाने के लिए भी कह दिया कि तुम लोग अपने साथ मेरे एक—एक अज़ीज़ को भी लेते जाओ। जब इस मंज़िल पर इमाम हुसैन[अ०] का ख़ुतबा पहुँचा तो जनाब अब्बास ही थे जो सबसे पहले उठे थे और फ़रमाया था कि आक़ा ये हरगिज़—हरगिज़ नहीं हो सकता कि हम आपका साथ छोड़ दें आप शहीद कर दिये जाएं और हम ज़िन्दा रहें। जनाब अब्बास के इस हौसलामन्दाना जवाब के बाद दूसरे वफ़ादारों ने अपनी जाँनिसारी का इज़हार किया। ऐसा सोचा भी नहीं जा सकता कि जनाब अब्बास से पहले मआज़ल्लाह दूसरे साथी मुज़बज़ब थे। और हज़रत अब्बास की तक़रीर से उनमें जोश व हिम्मत पैदा हुई। नहीं हरगिज़ नहीं बल्कि जनाब अब्बास की वफ़ादारी व जाँनिसारी की हैबत उनके दिलों पर ऐसी थी कि किसी को हिम्मत न हुई कि उनसे पहले उठने की जुरअत करता। सब मुन्तज़िर थे कि पहले जनाब अब्बास जवाब दे लें तब हम अपने दिल की बात कहें। यही वह जनाब अब्बास की वफ़ादारियाँ थीं कि उनकी शहादत पर इमाम को इरशाद फ़रमाना पड़ा:

"अब मेरी कमर टूट गई और राहे चार ओ तदबीर बाक़ी न रही" और इसी की बिना पर इमाम हुसैन[अ०] की तरफ़ मन्सूब शेर में जनाब अब्बास को कर्बला के शहीदों में अफ़ज़लुश्शोहदा का लक़ब दिया गया। और यही अज़मते किरदारे जनाब अब्बास है जिसकी बिना पर अबूहमज़ा सुमाली की इमाम जाफ़र सादिक़ से रिवायत करदा ज़ियारत में मदहो सना के फूल निछावर किये गए हैं।

ज़ियारत में जनाब अब्बास[अ०] की अज़मते किरदार, बलन्दि—ए—ईमान और आपके ख़ुलूसे अमल पर रौशनी पड़ती है। ज़बाने मासूम से हज़रत अब्बास की मद्होसना में अदा होने वाला उनका हर जुमला ताजदारे वफ़ा के ख़ुलूस की कलग़ी के लिए ऐसा गौहरे आबदार है जिसका जवाब मुमकिन नहीं। हर हर जुमला ऐसा है कि उसकी तशरीह के लिए पूरा मज़मून चाहिए।

बक़िया... शहादत है, मतलूब व मक़सूदे मोमिन

फिर लाशे अली असग़र लाकर ख़ेमे में मादरे अली असग़र हज़रत रुबाब से फ़रमाया तुम अपने बच्चे को ले लो! अब ये तुम से पानी कभी तलब नहीं करेगा। और फिर वह वक़्त भी आ गया जब इमाम आली मक़ाम का सरे अक़दस नेज़े पर बलन्द था और यज़ीदी फ़ौज फ़तह के बाजे बजा रही थी। आज आशूरे मुहर्रम है 61[हि०] में यही तो दिन था जब हुसैन[अ०] और अस्हाबे हुसैन के मुक़द्दस लाशे सहराए कर्बला में बेगोरो कफ़न पड़े थे। ख़यामे आले रसूल में आग लगी हुई थी। यज़ीद अपनी फ़तह पर नाज़ाँ था मगर आने वाली तारीख़ उसे झुठला रही थी कि तू हरगिज़ फ़ातेह नहीं है! फ़ातेह तो वह हुसैन[अ०] हैं जिन्होंने शहीद होकर हक़ व सदाक़त और इस्लाम की लाज रख ली और सच्चाई का अलम क़यामत तक के लिए बलन्द कर दिया, यज़ीदी आमिरियत के जनाज़े को रुसवाई के गहरे ग़ार में दफ़न कर दिया और औलादे आदम के ज़मीर को वह रौशनी दे दी जिसे लाखों यज़ीद मिलकर भी अब कभी नहीं बुझा सकते और अपने ख़ून से इन्सानियत के शऊर की तख़्ती पर तहरीर कर गए कि सच्चे मोमिन का मतलूब व मक़सूद माद्दी सलतनत व इक़्तेदार नहीं होता बल्कि हमेशा उसका मतलूब व मक़सूद राहे ख़ुदा में क़ुर्बानी और शहादत की ला ज़वाल इज़्ज़त का हासिल करना होता है।